IJARST
International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
ISSN: 2457-0362
www.ijarst.in

मध्ययुगीन भक्तिकाव्य की प्रासंगिकता वर्तमान काल में

डॉ.नागरगोजे ए.बी.

एच.पी.टी.आर.वाय.के.

महाविद्यालय, नाशिक—५.

प्रस्तावना:—

प्रस्तुत नश्वर संसार में हर चीज़ नष्ट होती है और नष्ट होती रहेगी, चुनाँचेनी विचार और सपने कभी समाप्त नहीं होंगे। किसी एक विचार के लिए किसी एक व्यष्टि को भगवान या अल्ला को प्यारा होना पड़ता है, लेकिन उसकी मृत्युपरान्त वह विचार करोड़ों जिंदगियों में अपने आपको अवतरित कर देता है। विकासी का पट्टिया इसी तरह दिन रात घूमता हुआ आगे बढ़ता है और विचार, कल्पना, भावना, बुद्धि, आदर्श और सपनें एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित होते रहते हैं। इस विश्व में कोई भी ऐसा विचार नहीं है जो यंत्रणा और बलिदान के आदर्श के बिना कभी भी प्रतिफलित हुए हैं।

वर्तमान भारतीय परिवेश में मध्ययुगीन भक्तिकाव्य की आवश्यकता जितनी आज है उतनी इसके पूर्व कभी नहीं रही। अत: उसका मूल्य तथा महत्व और बढ़ गया है। हमारा आज का भारतवर्ष परिवेश अनेकानेक समस्याओं से ग्रस्त है। इसलिए सबसे पहले वर्तमान भारतीय परिवेश पर थोड़ा सा आलोक:

लोकतंत्र संज्ञा की हैसियत से भारत विश्वभर में सबसे बड़ा देश है। भारतवर्ष को अगर संक्षेपण में कहा जाय तो वह बहुढ़ंगी, बहुरूपी, बहुबीजी, बहुताई, बहुदर्शी, बहुपत्री, बहुबाहू, बहुचर्चित देश है। भारतवर्ष के सभी क्षेत्रों में असंगति, दुमुहाप, अतिचार, तणाव,

मिथ्याचार, दुराचार, अनाचार, व्यभिचार, बनाव, ढोंग, ढकोसला, वजनसंख्या कुपोषण आदि स्वाधीनता के बाद बढ़ते ही जा रहे हैं। उससे ऐसा लगता है कि अमानवीकरण में लगा हुआ है। नैतिक तथा सत्य मूल्यों का ऱ्हास हो रहा है। जिन्हें इस देश को संभालने के लिए कहा वे ही इसे गिरवी रख रहे हैं। सिंहस्थ—कुंभ मेला धार्मिक अनुष्ठान था, आज वही मिथ्याचार का प्रतिष्ठान हो रहा है। महानगरों में विश्वविद्यालय तथा महाविद्यालय इल्म ज्ञान का केंद्र रहा लेकिन आज वह आवारागर्दी के कारण प्रमाणपत्र वितरण नाभि बन गया है। मंदिर मस्जिद समाज मन शांति की जगह थी, पर आज वह सामाजिक अशांति का उत्सव बन गया है। महिला श्रद्धा देवी की मूर्ति थी लेकिन राजीव गांधी की हत्या से स्पष्ट हुआ कि वह श्रद्धाहीन पाषाण बन रही है।

पारिवारिक विघटन, समाज तथा भाईबंदो की जन्म प्रवृत्ति, यौन अराजकता, जी—स्टार प्लस जैसे दूरदर्शन से प्रभावित भोगवाद तथा प्रांतीय सरोकार की खामियों के कारण मेरा भारत इतना महान है जो संपन्न विदेशों का कूड़ा करकट भी आयात कर रहा है। चाहे वह मल हो, चाहे निकम्मे कागजात हो, चाहे और कोई जादुई कागज हो। इन्हे स्वीकार करने में हमारी श्लाध्यता है। हरित क्रांति के नाम पर रेतक्रांति हो रही है। पर्यावरण—प्रदूषण के उत्सव में प्रगति के नाम वृक्ष जोड़—तोड़ पौधे खाल का सिलसिला जारी है। उर्वरकों और किटाणु नाशकों के उपयोग में असंयम दिखाई पड़ रहा है। पूरे भारत में सत्ताधारी या विपक्षी या अन्य दलों के साथ—साथ आम जनता भी डंकेलरिया रोग से ग्रस्त हो गयी है। ये सारे वर्तमान भारतीय परिवेश के ही शगुन है।

भक्तिकाव्य की प्रासंगिकताः—

विविध भाषा—साहित्य में, विविधकाल में काव्य का सृजन होता रहा, लेकिन मध्यकाल का भक्तिकाव्य हिन्दी साहित्य का सुवर्णकाल माना जाता है। और प्रस्तुत काल के पद्यसाहित्य की नौवे दशक में बहुत आवश्यकता है।

एक नजर प्रासंगिकता परः—

प्रासंगिक माने प्रसंग संबंधी, प्रसंग द्वारा प्राप्त किसी विशिष्ट प्रसंग में आकस्मिक रूप से सन्मुख आनेवाली घटना प्रासंगिकता है। अकालिक, अनुषंगिक, अनैमित्मिक तथ्य या कथा यानी प्रासंगिकता है। यों ही किसी समय उपस्थिती हो जाने वाला वह प्रसंग जिसमें कुछ विरोध कार्य या व्यय पर विचार करने की आवश्यकता आ पड़े वह प्रासंगिकता है।

प्रस्तुत कसौटी पर कसकर देखे तो आधुनिक भारतीय वातावरण में मध्यकाल के भक्तिकाल का बड़प्पन स्पष्ट दृष्टिगोचन होता है। अधिकतम आचार्यो ने हिन्दी साहित्य के काल विभाजनानुसार पूर्व मध्यकाल यानी भक्तिकाल या धार्मिक काल सं.१३७५ से १७०० तक माना है। भक्तिकाल की प्रमुख तीन धाराएँ थी—

१. निर्गुण पति की ज्ञानाश्रयी शाखा

२. प्रेममार्गी शाखा

३. भक्तिमाग शाखा

निर्गुण पंथ की ज्ञानाश्रयी शाखा हिंदुओं की ओर से हिन्दू—मुस्लिम एकता स्थापित करने की प्रबल अपेक्षा का फल था।

IJARST
International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal www.ijarst.in
ISSN: 2457-0362

संत कवियों न निर्गुणवाद में हिन्दू और मुसलमानों में समीपता की संभावना देखी। मुसलमान समष्टि एकेरवरवाद के पूजक थे जिनका मूलमंत्र था, ला इल्लाह लिल् इल्लाह मुहम्मद रसूल अल्लाह, अर्थात अल्लाह ही एक खुदा है और मुहम्मद खुदा का दूत है। संक्षेप में वे बहु देव देवताओं के खिलाफ थे। तत्काल में हिन्दू समाज भी बहु देव देवतावादी नहीं थे, वे सभी देव देवताओं में एक परमात्मा का ही रूप मानते थे— एक सत् विप्राः बहुधा वदन्ति। इस प्रकार हिंदुओं का निर्गुणवाद के आधार पर अल्लाह के बहुत निकट रहा संत कवियों ने निर्गुणवाद के आधार पर ही राम और रहीम की एकता की तथा हिन्दू मुसलमानों की निदर्शक रूढ़ियों का विरोध कर दोनों धर्मों में प्रेम, स्नेह, श्रद्धा, त्याग, कुर्बानी उत्पन्न करने की काफी कोशिश की जिसके शीर्षस्थ है। महात्मा कबीर कहते हैं कबीर की परवरिश यद्यपि मुसलमान के घर में हुई किंतु आचार्य रामानंद का शिष्यत्व ग्रहण करने के कारण उन्हें हिन्दू कहते है। और सबसे बड़प्पन की बात यह कि, इनकी आदर्श परंपरा को हिन्दुओं ने आगे बढ़ाया। महात्मा कबीर सदा कहा करते हैं।

साधो एक रूप सब माँही
अपने मन विचार के देखो, कोई दूसरा नाही.

कबीर ने अपने परमात्मा को अपने आप में ही देखा है। ये रूढ़िवाद के कट्टर विरोधी थे इसलिए इन्होंने हिन्दू और मुसलमान दोनों संप्रदायों की खूब खिंचाई की— इन दोऊन राह न पाई।

कबीर के विचारों में योगदान देने वालों में और भक्तिमाव्य के मुख्य कवि है—सर्वश्री धर्मदास, रैदास, गुरूनानक, दादूदयाल, सुंदरदास, मलूकदास, अक्षर, अनन्य, रज्जन, गरीबदास, निश्चलदास,

जगजीवनदास, दूतेनदास, मानीसाहब, मुल्लासाहब, सहजोबाई, दयाबाई, पलूटदास आदि।

मुस्लिमों का सूफी संप्रदाय हिन्दू धर्म के निकट रहा। सूफी परमात्मा को अपने प्रेम—पात्र के रूप में देखते थे, जबकी साधारण शरीयत को माननेवाले मुसलमान ईश्वर के सा मालिक और बंदे का संबंध मानता है। इन खतों ने हिन्दू प्रेमगाथाओं को लेकर काव्य रचना की, और फिर उनके द्वारा ही अपने सिद्धांतों का प्रतिपादन किया। मालिक मुहम्मद जायसी प्रस्तुत शाखा के प्रधान कवि रहे। जायसी की पदमावत, अखरावट और आखिरी कलाम ये तीन ग्रंथ सुविख्यात है। प्रेम मार्ग शाखा में योगदान देनेवाले में प्रमुख कवि है। कुतुबन, मंझल, उसमान, शेख नबी, कासिमशाह, नुरमुहम्मद फाजिल शाह, शेख निसार, दामो, हरिराज, मोहनदास जैसे हिन्दू मुसलमान कवियों का नाम इस परंपरा में गौरव के साथ लिया सकता है।

भक्तिमार्गों काव्यधारा उन भक्तों के ह्दय से प्रवाहित हुई जो अपने अभिषिक्त देवों की पूजा और उपासना में व्यस्त थे। वे पूरे देश और समग्र जाति का कल्याण भगवद्‌भजन में ही देखते थे। उन्होंने राजदरबारों के ऐश्वर्य में जनिक भी आकर्षण न था। वे लोग मुसलमानों से बैर नहीं रखते थे, अर्थात उन्हें मिलने की इच्छा भी नहीं रखते थे। वे शहंशाह का नियंत्रण आने पर कह भी देते थे—संतन को कहा सीकरी से काम? यह कुंभनदास की लिखी कविता की वह पॉकी है जब बादशाह अकबर ने कृष्णभक्त कवि कुंभनदास को अपनी राजधानी फतहपूर सीकरी में आने के लिए बुलावा भेजा था।

प्रस्तुत भक्तिमार्ग शाखा दो और धाराओं में स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है (१) रामभक्ति शाखा (२) कृष्णभक्ति शाखा। रामभक्ति शाखा

के प्रमुख कवि है—गोस्वामी तुलसीदास। तुलसीदास अपने संबंध में या अन्यों के संबंध में आज के समाज जाति पाँति का गर्व नहीं रखते थे, भेदाभेद, ऊँचनीच का भाव उनके मन में कर्ता नहीं था जो वर्तमान भारतीय समाज में आरक्षण को लेकर मंडल—कमंडल को लेकर सर्वत्र दिखाई पड़ता है। उन्होंने तुलसी ग्रंथावली में स्पष्ट शब्दों में लिखा है कि—

मेरे जाति—पाति, न चहौ काहू की जाति पाति
मेरे कोर काम को नहौ काऊ के काम को।।
जाति के सृजति के, कुजाति के, पेटगिबस
साए टूक सबके विदित बात दूनी सो।।

प्रस्तुत परंपरा में योगदान देनेवाले और मुख्य कवि हे नाभादास, प्राणचंद चौहान, महाकवि केशव आदि ने सामाजिक विनोद लेकर इस परंपरा में उल्लेखनीय साहित्य सृजन का कार्य किया है।

भक्ति मार्ग की ही दूसरी शाखा कृष्णभक्ति में सर्वाधिक योगदान रहा—सूरदास जी का। सूरदासजी के पाँच काव्य रचनाएँ बतायी जाती है। सूरसागर, खसूर, सारावली, साहित्यलहरी, नलदमयंती, व्याहलो आदि। समग्र ग्रंथों का सार, में सूर में जहाँ नम्रता है, कृष्णप्रेम है, दीनता है, हीनता है, वहाँ कृष्णभक्ति के माध्यम से भगवान की कृपा प्रसार का भी वर्णन है। जैसे—

प्रभु है सब पतितानि कौ टीकौ।
मोहि छाँडि तुम और उधारे मिटै सूल क्यों जी की।
कोऊ न समरथ ऊघ करिबे को, खेंचि कहत दो लीकौ।।
कमल नयन घनश्याम मनोहर अनुचर भयौ रहौ।

International Journal For Advanced Research In Science & Technology
A peer reviewed international journal
ISSN: 2457-0362
www.ijarst.in

सूरदास प्रभु भक्त कृपानिधी अनुचर चरण रहौ।।

श्री कृष्णभक्ति शाखा में विशेष सहयोग देनेवाले अन्य कविवर है— नंददास, परमानंददास, कृष्णदास, कुंभनदास, गोविंदस्वामी, छीतस्वामी, चतुर्भुजदास, हितहरिवंश, हितवृंदावनदास, गदाधर भट, हरिदास, मीरा, रसखाल, घणानंद आदि।

सरासरी निगाह से अगर आज पीछे मुड़कर देखे तो भक्तिकाल की अनेकानेक विशेषताएँ है, जो वर्तमान भारतीय परिवेश में अहम् मुद्दा रखती है। कबीर ने दो धर्मों के भी कभी बैर नहीं देखा, सभी कवियों को धार्मिक बाह्याडंबर से सक्त नफरत थी। सभी प्रेम की महिमा गाते रहे किसी ने भी स्वार्थ वश प्रेम नही बख्शा। सभी ने शांत सुखाम लिखा, कोई भी प्रसिद्धी नहीं चाहते थे। श्री तुलसी तथा सूर राम कृष्णमय बन गए थे, इन्हींने नाम की महता गायी। जप, कीर्तन, आदि संतो, सूफियों और भक्तों में समाज रूप से मान्य है। वर्तमान परिवेश में प्रभुनाम की नहीं अपने नाम की महिमा गायी जाती है। थोड़ा सा दान देने पर मंदिरों में अपने नाम की हवस जादा है। ट्यूबलाईट, घंटा, कुर्सी या चौखट भेंट करने पर प्रभू नाम गौण हो जाता है, वहाँ किसने और क्या—क्या भेंट दिया है उसकी लंबी सूची पढ़ता है, इस प्रकार आज अपने नाम की महता, भक्त के नाम की महता अधिक वर्णन दिखायी देती है।

समाज में तत्काल के गुरू को अधिकतम मान्यता थी कबीर ने तो गुरू को परमेश्वर से भी महत्व बताया है। गुरूगोविंद दोऊ खडै, काकै लगै पास मैं तो बलिहारी जाय जिनौ गोविंद बातारामजी से गुरू की वंदना की है। तुलसी तथा सूरते भी अपने ग्रंथों के आरंभ में गुरू महिमा गायी हो। संक्षेप में गुरू देवौ भव, आज जमाना बदल गया है,

IJARST
International Journal For Advanced Research
In Science & Technology
A peer reviewed international journal
ISSN: 2457-0362
www.ijarst.in

आज शिक्षा क्षेत्र में तो शिष्य देवौ भव अर्थात इसके लिए हम ही जिम्मेदार है। उन दिनों में गुरू मिलना मुश्किल था आज तो गुरू बहुत सस्ते हो गये है, उन्हें कोई भी कहीं से भी जब चाहे तब खरीद लेते है, और काम होने पर उन्हें ऐसे फेक देते हैं, जैसे आम की गुठली, गुरू को डाट फाटकर अंक हाँसिल कर लेने में तो उत्तर भारत में एक लहर सी दौड़ रही है।

प्रस्तुत काल में भक्ति भावना को अधिकतम प्राधान्य था। ज्ञान और भक्ति ही सबकुछ था। चारो संप्रदायों में भक्ति ही सर्वोपरी थी। आज भी भक्ति होती है लेकिन वह ईश्वर भक्ति के स्थान स्वामिभक्ति, व्यक्तिभक्ति, चेअरमन, सेक्रेटरी, अध्यक्ष, मंत्री, संसद विधायक, सरपंच भक्ति प्रधान रूप से दिखाई देती है। भक्त भी क्या करे आज का परिवेश ही ऐसा है, उन्हें साक्षात भगवान के स्थान पर उन्हीं भगवान से साक्षात मदद की अभिलाषा अत: आज भक्ति का दोर व्यष्टि पूजा हो गयी है।

भक्तिकाल में भक्तकवि तथा गणप्रार्थी जरा भी अहंकार नहीं रखते थे। अहंकार का त्याग कर दीन, हीन लाचार, भाव से ही भगवद्भक्ति विद्यमान थी। आज ऐसे नहीं रहा है। आज के भक्तों में सम्मान, असम्मान, गरीब, अमीर, ऊँच नीच, अभिमानी—स्वाभिमानी जैसे बहुरूप दिखाई देते है। मध्यकाल में सच्चा भक्त चाहे सगुणवादी हो चाहे निर्गुणवादी घमंण्ड जरा भी उनके पास लटकता नहीं था। आज तो भक्त सारे आम—हम फलाने—फलाने के भक्त है कहकर अहंकार में डूबे है। देश के चार प्रमुख कुंभमेला के क्षेत्र में जब कुंभ पर्व शुरू होता है, तब से विशेषत: दिखाई दता है। नाशिक के कुंभ मेले में भक्तों की आपस में विभिन्न दल, संप्रदाय को लेकर लड़ाई

झगड़ा करते है, प्रसंग वंश मारपीट हुई, इस बात के पक्के सबूत पुलिस थाने में दर्ज है, अत: वर्तमान भारतीय परिवेश में भक्तिकाव्य की प्रासंगिकता लक्षणीय है।

भक्तिकाल में साधू संगति की महिमा असीम ब्रम्ह के निर्गुण और सगुण रूप माननेवाले संत और भक्त दोनों ही प्रकार के काव्यों में सत्संग की विशेष महिमा गायी है। जैसे

कबिरा संगति साधु की हरै और की व्याधि
संगत बुरी असाधु की आठों पहर उपाधि

लेकिन आज सत्य साईबाबा तथा अन्य साधुओं की लीला की पोल खोल के बाद इनकी संगति का महिमा अकथनीय तथा अवर्णनीय है। इस बारे में मौन रखना ही मेरी सुगति है। अत: कुछ बातें आप पर सौपता हूँ।

मध्यकाल में जाति पाँति के बंधनों को नहीं मानते थे।

जाति पाँति पूछे नहिं कोई
हरि को भजै सो हरि को होई

आज के समाज तब भी विविध विशेषताएँ थी और भी अनेक अखरने वाली बातें थी, क्षूद्रो की स्थिति तो विशेष रूप से सोचनीय थी। अत: भक्तिकाल के कवियों ने इन सबको तिलांजली देकर एक बनकर रहते की, सीख दी। इसकी आज भी बड़ी आवश्यकता ही भक्त कवियों की मान्यता है कि भगवान के अनुग्रह से ही व्यक्ति को सद्गति मिलती है। अटल भक्ति कर्म भेद, जाति भेद सबके ऊपर है। प्रस्तुत काल में सत्संग तथा प्रीति विषयों का वर्णन भी अच्छा खासा है। कई स्थानों पर लोगों का शील—गुण भी अच्छा दिखाया है।

निष्कर्ष:—

संक्षेप में भक्ति काल में जो वातावरण भक्तों ने निर्माण किया कवियों ने अपनी काव्य प्रतिभा से जो देखा, परखा, उसके उपलक्ष्य में जो सृजन किया उसी की आज पुरश्च आवश्यकता है। वर्तमान भारतीय परिवेश में भक्तों की एकनिष्ठता, सत्संग, श्रद्धा, त्याग वफा वात्सल्य की प्रासंगिकता है। जनता में पनप रहा—लोभ, मोह, मद, मत्सर को हटाकर उन्हें विनम्र बनाने का प्रयास करना चाहिए। मंदिर, मस्जिद जैसे झगड़े को त्याग कर मन:शांति के लिए आरती करनी चाहिए। अन्यथा बंब जैसे महानगरी में पिछले दिनों रास्तों में महानमाज और महाआरती का भोंडा प्रदर्शन कर भक्तों की पोल खोल हुई है। दिखावा के स्थान पर हार्दिक एकरूपता की आवश्यकता है। अत: मध्यकालीन भक्तिकाव्य में संतों ने अक्षरजननियों ने समाज में जो प्रेम प्रकटकर सेवा की है उस प्रसंग की आज निहायत जरूरी अत: वर्तमान युग में कबीर के समज या सुर, तुलसी के समाज को व्यंग्य की खरी खरी बाते सुनार विसंगति का पर्दापाश करना जरूरी है। संक्षेप में वर्तमान भारतीय परिवेश में मध्यकालीन भक्तिकाव्य के समज व्यंग्य विद्या के सृजन की सशक्तता की जरूरी है।

धन्यवाद!

प्रस्तुत कर्ता

डॉ.नागरगोजे ए.बी.

एच.पी.टी.आर.वाय.के.

महाविद्यालय, नाशिक—५.